Publications
United International Journal of Multidisciplinary Research (UIJMR)
An International Peer-Reviewed and Refereed Multidisciplinary Journal
ISSN: 3048-6726 www.uijmr.in uijmreditor@gmail.com Vol-1,Issue-3(Oct-Dec),2024

स्वतंत्रता पश्चात भारतीय राजनीति में जे. बी. कृपलानी के नेतृत्व और विरासत की रचनात्मक आलोचना

प्रीति
शोधार्थी
इतिहास विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणाडॉ. कुमारी सुमन
सहायक प्राध्यापिका
इतिहास विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा

Article Received:08-11-2024 Article Modified:24-12-2024
Article Accepted:26-12-2024 Article Published: 28-12-2024
DOI:10.37854/UIJMR.2024.1.3.66

रांश

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में जहां एक ओर सत्ता का केंद्रीकरण और राजनीतिक व्यावहारिकता केंद्र में आई, वहीं दूसरी ओर आचार्य जे.बी. कृपलानी जैसे नेता थे जिन्होंने गांधीवादी मूल्यों, नैतिकता और असहमति की संस्कृति को जीवित रखा। यह शोधपत्र कृपलानी की स्वतंत्रता के बाद की राजनीतिक यात्रा, विशेषकर कांग्रेस से अलग होकर सत्ता के नैतिक मूल्यांकन की परंपरा को आगे बढ़ाने में उनकी भूमिका पर केंद्रित है। कृपलानी ने 'किसान मजदूर प्रजा पार्टी' के माध्यम से वैकल्पिक राजनीतिक विमर्श को जन्म दिया और संसद में सरकार की रचनात्मक आलोचना की। आज जब भारत में लोकतांत्रिक संस्थाएं दबाव में हैं, तब कृपलानी की विचारधारा और उनका नैतिक नेतृत्व हमें लोकतंत्र की आत्मा को पुनः समझने का अवसर प्रदान करता है।

सूचक शब्द : जे.बी. कृपलानी, नैतिक नेतृत्व, सत्ता की आलोचना, गांधीवादी राजनीति, वैकल्पिक विमर्श, स्वतंत्रता के बाद भारत, कांग्रेस से अलगाव, लोकतंत्र की रक्षा

1. प्रस्तावना

भारत की स्वतंत्रता केवल राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण नहीं थी, बल्कि यह एक नैतिक और वैचारिक परिवर्तन की प्रक्रिया भी थी। गांधी, नेहरू, पटेल, अंबेडकर जैसे नेताओं के बीच वैचारिक विविधता इस परिवर्तन की समृद्धि का संकेत थी। परंतु स्वतंत्रता के बाद की राजनीति ने अपेक्षाकृत शीघ्र ही व्यवहारिकता, केंद्रीकरण और सत्ता के संरक्षण की ओर अग्रसर होना प्रारंभ किया। ऐसे समय में आचार्य जे.बी. कृपलानी एक ऐसे नैतिक आवाज के रूप में उभरे, जिन्होंने गांधीवाद के मूल्यों—सत्य, अहिंसा, विकेंद्रीकरण और सत्ता के प्रति उत्तरदायित्व—को सार्वजनिक और संसदीय जीवन में बनाए रखने का प्रयास किया। [1]

कृपलानी ने सत्ता के निकट होते हुए भी सत्ताधारी मानसिकता को आत्मसात नहीं किया। उनका यह आग्रह था कि स्वतंत्र भारत में सत्ता का प्रयोग सेवा के रूप में हो, प्रभुत्व के रूप में नहीं। जब कांग्रेस का सत्ताधारी नेतृत्व इस मार्ग से विचलित हुआ, तो कृपलानी ने संगठन से अलग होकर नैतिक असहमति का मार्ग चुना। यह निर्णय महज व्यक्तिगत विरोध नहीं, बल्कि एक संस्थागत चेतना थी कि सत्ता को निरंतर मूल्यांकन और आलोचना की आवश्यकता होती है। [2]

आचार्य कृपलानी का व्यक्तित्व और नेतृत्व भारतीय लोकतंत्र में एक वैकल्पिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है—एक ऐसी परंपरा जो सत्ता की आलोचना को राष्ट्र-विरोध नहीं, बल्कि राष्ट्र-निर्माण का माध्यम मानती है। उन्होंने 1951 में 'किसान मजदूर प्रजा पार्टी' का गठन कर यह दर्शाया कि विपक्ष केवल सत्ता प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि नैतिक विकल्प प्रस्तुत करने का मंच भी हो सकता है। कृपलानी ने संसद में सरकार की आलोचना करते हुए कई बार यह रेखांकित किया कि नीति निर्माण में नैतिक विवेक और जन उत्तरदायित्व को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। [3]

यह शोध इसी वैकल्पिक राजनीतिक परंपरा के पुनर्पाठ का प्रयास है। जब आज लोकतांत्रिक विमर्श असहिष्णुता, व्यक्तिवाद और सत्ता के अंध समर्थन से ग्रसित प्रतीत होता है, तब कृपलानी की नैतिक असहमति हमें पुनः यह स्मरण कराती है कि लोकतंत्र केवल चुनाव नहीं, बल्कि सतत संवाद, विवेकपूर्ण आलोचना और उत्तरदायी शासन का नाम है। प्रस्तुत शोधपत्र कृपलानी के स्वतंत्रता पश्चात नेतृत्व का विश्लेषण करते हुए उनके राजनीतिक विचारों और आचरण की समकालीन प्रासंगिकता की पहचान करने का प्रयास करता है।

2. स्वतंत्रता पश्चात कृपलानी की भूमिका: नैतिक नेतृत्व का निर्माण

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय राजनीति के परिदृश्य में जब अधिकांश राष्ट्रीय नेता सत्ता और प्रशासन के निर्माण में व्यस्त हो गए, तब आचार्य जे.बी. कृपलानी ने सत्ता से दूरी बनाकर एक नैतिक प्रहरी की भूमिका निभाई। उन्होंने स्वतंत्र भारत की राजनीति को केवल चुनावी सफलता या प्रशासनिक दक्षता तक सीमित नहीं माना, बल्कि उसे एक नैतिक और वैचारिक जिम्मेदारी के रूप में देखा। गांधीजी की मृत्यु के पश्चात जब कांग्रेस संगठन में अवसरवाद और केंद्रीकरण की प्रवृत्तियाँ उभरने लगीं, तब कृपलानी ने एक सशक्त वैचारिक विकल्प प्रस्तुत करने की आवश्यकता महसूस की। [4]

1947 में कांग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तीफा देना, कृपलानी के नैतिक मूल्यों और संस्थागत लोकतंत्र के प्रति उनकी प्रतिबद्धता का संकेत था। वे मानते थे कि सत्ता का केंद्रीकरण और निर्णयों में नैतिक विवेक की कमी, लोकतंत्र को कमजोर कर सकती है। उनका यह चिंतन उस समय अप्रचलित था, जब अधिकांश नेता कांग्रेस की सत्ता को राष्ट्रनिर्माण का पर्याय मानते थे। कृपलानी ने साफ़ तौर पर कहा था कि सत्ताधारी नेतृत्व का नैतिक मूल्यांकन लोकतंत्र के स्वस्थ विकास के लिए अनिवार्य है। [5]

1951 में जब उन्होंने 'किसान मजदूर प्रजा पार्टी' का गठन किया, तो यह महज एक राजनीतिक दल नहीं, बल्कि गांधीवादी मूल्यों पर आधारित एक नैतिक आंदोलन था। पार्टी का उद्देश्य संसद में रचनात्मक विपक्ष की भूमिका निभाना था—ऐसा विपक्ष जो केवल विरोध न करे, बल्कि नीतिगत विकल्प और नैतिक विवेक का मार्ग भी दिखाए। कृपलानी स्वयं संसद में एक अत्यंत मुखर और नीतिगत आलोचक के रूप में स्थापित हुए। उन्होंने भ्रष्टाचार, सत्ता के दुरुपयोग और असंवेदनशील नीति निर्माण के विरुद्ध कई बार सरकार की तीखी आलोचना की। [6]

कृपलानी की इस भूमिका को तत्कालीन सरकारों ने कई बार असहजता के साथ लिया, किंतु लोकतंत्र के दृष्टिकोण से यह भूमिका अत्यंत मूल्यवान थी। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राष्ट्र निर्माण केवल शासन करने से नहीं, बल्कि शासन की निरंतर नैतिक समीक्षा से संभव होता है। स्वतंत्रता के बाद कृपलानी का नैतिक नेतृत्व उस परंपरा को आगे बढ़ाता है, जिसमें राजनीति जनसेवा, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व का माध्यम बनती है, न कि केवल सत्ता प्राप्ति का साधन।

3. सत्ता की नैतिक समीक्षा की परंपरा

भारतीय लोकतंत्र में सत्ता की आलोचना को लंबे समय तक राष्ट्रविरोध या विद्रोह के रूप में देखा जाता रहा है, परंतु आचार्य जे.बी. कृपलानी ने इसे एक नैतिक आवश्यकता के रूप में स्थापित किया। उन्होंने यह स्वीकार किया कि लोकतंत्र की सार्थकता केवल चुनाव और बहुमत से तय नहीं होती, बल्कि इसमें सत्ता का निरंतर मूल्यांकन, नागरिकों की भागीदारी और नैतिक विवेक आवश्यक तत्व होते हैं। कृपलानी के लिए राजनीति एक सार्वजनिक कर्तव्य थी, जहाँ सत्ता का उपभोग नहीं, सेवा और जबाबदेही की भावना सर्वोपरि थी। [7]

उनकी यह सोच गांधीवादी परंपरा का विस्तार थी, जहाँ शासन को नियंत्रित और सीमित करने के लिए नैतिक साधनों का प्रयोग आवश्यक माना गया। कृपलानी ने संसद को मात्र विधायी संस्था नहीं, बल्कि लोकतंत्र का नैतिक मंच माना जहाँ सत्ता से प्रश्न पूछना, असहमति व्यक्त करना और नीति के सामाजिक प्रभावों की विवेचना करना प्रतिनिधियों का नैतिक दायित्व है। उन्होंने कहा था कि यदि सत्ता को बिना समीक्षा के चलने दिया गया, तो यह लोकतंत्र को अधिनायकवाद में बदल सकती है। [8]

उनका यह दृष्टिकोण न केवल विचारधारा आधारित था, बल्कि व्यावहारिक राजनीति में भी उन्होंने इसे साकार किया। संसद में उनके भाषण सत्ता पक्ष के लिए असहज होते थे, किंतु वे अत्यंत विवेकपूर्ण और तथ्य आधारित होते थे। उन्होंने वित्तीय अनियमितताओं, प्रशासनिक भ्रांतियों और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं की अनदेखी पर लगातार सरकार को घेरा। उनकी यह शैली आज की राजनीति के लिए भी एक सीख है कि आलोचना शत्रुता नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व की मांग है। [9]

कृपलानी ने बार-बार इस बात पर बल दिया कि सत्ता पर नैतिक दबाव न हो तो वह स्वेच्छाचारी हो सकती है। उनका यह विचार मौलिक रूप से आधुनिक लोकतंत्र के सिद्धांतों से मेल खाता है—जहाँ सत्ता की वैधता केवल मतों से नहीं, बल्कि उसकी नैतिकता से भी तय होती है। उन्होंने विपक्ष को केवल सत्ता परिवर्तन का माध्यम नहीं, बल्कि शासन की निरंतर नैतिक समीक्षा का उपकरण बताया। यही कारण है कि उनकी आलोचना, उनकी पार्टी की अल्प संख्या के बावजूद, भारतीय संसद में गंभीरता से सुनी जाती थी। [10]

आज जब आलोचना और असहमति को अनेक बार राष्ट्र-विरोधी या विध्वंसात्मक करार दिया जाता है, तब कृपलानी की परंपरा हमें यह याद दिलाती है कि लोकतंत्र में असहमति ही असली स्फूर्ति है। सत्ता की नैतिक समीक्षा कोई बाधा नहीं, बल्कि लोकतंत्र की सुरक्षा और उसकी जीवंतता की आधारशिला है।

4. वैकल्पिक राजनीति और संसद में असहमति

कृपलानी का राजनैतिक जीवन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एक ऐसे वैकल्पिक विमर्श का प्रतीक बन गया था जो सत्ता की आलोचना को रचनात्मक और नैतिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है। उन्होंने यह बार-बार रेखांकित किया कि भारत जैसे विविधतापूर्ण और लोकतांत्रिक देश में सत्ताधारी पार्टी से असहमति कोई विघटनकारी क्रिया नहीं, बल्कि स्वस्थ लोकतंत्र की पहचान है।

'किसान मजदूर प्रजा पार्टी' का गठन केवल राजनीतिक विकल्प उत्पन्न करने का प्रयास नहीं था, बल्कि यह उस नैतिक और वैचारिक परंपरा की पुनर्स्थापना थी जिसे गांधी जी ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान विकसित किया था। कृपलानी चाहते थे कि संसद न केवल विधायी कामकाज का केंद्र हो, बल्कि यह नैतिक बहस, नीति की विवेचना और सत्ता के उत्तरदायित्व की चेतना का भी केंद्र बने। उनके संसद में दिए गए भाषण हमेशा तथ्य आधारित, नैतिक दृष्टिकोण से युक्त और तर्कसंगत होते थे, जिससे सत्ता पक्ष को आत्ममंथन के लिए विवश होना पड़ता था। [11]

उनकी आलोचना केवल विरोध के लिए विरोध नहीं थी। उन्होंने शासन की विसंगतियों, नीति के प्रभावों और आम जनता की अपेक्षाओं के बीच संतुलन की आवश्यकता को उजागर किया। वे मानते थे कि संसद को केवल समर्थन देने वाली संस्था में तब्दील

Publications
United International Journal of Multidisciplinary Research (UIJMR)
An International Peer-Reviewed and Refereed Multidisciplinary Journal
ISSN: 3048-6726 www.uijmr.in uijmreditor@gmail.com Vol-1,Issue-3(Oct-Dec),2024

करना लोकतंत्र के मूलभूत उद्देश्य के साथ विश्वासघात होगा। उन्होंने विपक्ष की भूमिका को 'राजनीतिक अंतरात्मा' के रूप में परिभाषित किया जो निरंतर सत्ता को उसके उत्तरदायित्व की याद दिलाती रहे।

इस वैकल्पिक राजनीति की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि यह विचार और आचरण के बीच की खाई को पाटने का प्रयास करती थी। कृपलानी स्वयं एक अत्यंत सादा जीवन जीने वाले, सत्यनिष्ठ और पारदर्शिता में विश्वास रखने वाले नेता थे। उनकी राजनीति में न तो जातिवादी समीकरण थे, न ही संख्याबल की जोड़-तोड़। उन्होंने अपने वैचारिक साहस से यह सिद्ध किया कि नैतिक बल, जनबल से भी अधिक शक्तिशाली होता है यदि उसे ईमानदारी और प्रतिबद्धता से निभाया जाए।

आज जब संसदीय विपक्ष की भूमिका सीमित होती जा रही है, और असहमति को अनेक बार राजनीतिक दुर्भावना से देखा जाता है, तब कृपलानी का यह मॉडल पुनः प्रासंगिक हो उठा है। उन्होंने दिखाया कि एक छोटा विपक्ष भी यदि नैतिक और वैचारिक रूप से सशक्त हो, तो वह लोकतंत्र की रक्षा में अत्यंत प्रभावी भूमिका निभा सकता है।

5. विरासत और समकालीन प्रासंगिकता

आचार्य जे.बी. कृपलानी की राजनीतिक विरासत भारत की लोकतांत्रिक परंपरा में एक नैतिक प्रतिमान के रूप में स्थापित होती है। उन्होंने यह प्रमाणित किया कि राजनीति केवल सत्ता संचालन की प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक नैतिक अनुशासन भी है। कृपलानी के विचार और व्यवहार ने यह स्पष्ट किया कि एक नेता का कद उसकी पदवी से नहीं, बल्कि उसकी विचारशीलता, पारदर्शिता और जनहित के प्रति प्रतिबद्धता से मापा जाता है।

आज के राजनीतिक परिदृश्य में जब मूल्य आधारित नेतृत्व का संकट अनुभव होता है, कृपलानी की परंपरा उस रिक्तता को भरने का मार्ग दिखाती है। उनकी विचारधारा न तो पुरानी हो चुकी है, न ही अप्रासंगिक। विकेंद्रीकरण, पारदर्शिता, विपक्ष की गरिमा और सत्ता की नैतिक समीक्षा जैसे सिद्धांत आज भी प्रासंगिक हैं और लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं। [11]

समकालीन भारत में जब असहमति को अनेक बार राष्ट्रविरोध के साथ जोड़ा जाता है, तब कृपलानी की राजनीति यह याद दिलाती है कि असहमति, संवाद और आत्मालोचना ही लोकतांत्रिक चेतना के संवाहक तत्व हैं। उन्होंने यह दिखाया कि विपक्ष केवल संख्या का खेल नहीं, बल्कि जनसंवेदना और विवेक का प्रतिनिधि भी होता है।

उनका जीवन राजनीतिक कार्यकर्ताओं और नीतिनिर्माताओं के लिए यह प्रेरणा देता है कि राजनीति में नैतिकता केवल आदर्श नहीं, बल्कि व्यावहारिक आवश्यकता है। कृपलानी की राजनीति, आज की राजनीति के लिए एक दर्पण है जिसमें हम लोकतंत्र की आत्मा और उसकी प्राथमिकताओं को पुनः पहचान सकते हैं। [12]

इस प्रकार, कृपलानी की विरासत एक नैतिक आंदोलन है जो भारतीय राजनीति को सतत रूप से चुनौती भी देता है और प्रेरणा भी। उनकी स्मृति केवल इतिहास की वस्तु नहीं, बल्कि भविष्य की चेतना है जो हर पीढ़ी को राजनीति की आत्मा से जोड़ती है।

6. निष्कर्ष

आचार्य जे.बी. कृपलानी भारतीय राजनीति में एक ऐसी आवाज थे, जिन्होंने स्वतंत्रता के बाद की सत्ता-केन्द्रित राजनीति के बीच नैतिक मूल्यों, जनसंवेदना और लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व को जीवित रखने का कार्य किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राजनीति केवल सत्ता का संचालन नहीं, बल्कि एक नैतिक व वैचारिक अनुष्ठान है जिसमें जनता के प्रति जबावदेही सर्वोपरि है। उनकी असहमति, उनके विचार और उनका व्यवहार इस बात के उदाहरण हैं कि कैसे एक व्यक्ति सत्ता से बाहर रहकर भी राजनीति की आत्मा को जीवंत रख सकता है।

Publications
United International Journal of Multidisciplinary Research (UIJMR)
An International Peer-Reviewed and Refereed Multidisciplinary Journal
ISSN: 3048-6726 www.uijmr.in uijmreditor@gmail.com Vol-1,Issue-3(Oct-Dec),2024

यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कृपलानी की राजनीतिक यात्रा एक नैतिक धारा का प्रतिनिधित्व करती है जो आज भी भारतीय लोकतंत्र को एक वैकल्पिक दिशा दे सकती है। उनका योगदान न केवल ऐतिहासिक है, बल्कि भविष्य की राजनीति के लिए भी मार्गदर्शक है। आज जब लोकतंत्र को वैचारिक गहराई, नैतिक साहस और सार्वजनिक संवाद की आवश्यकता है, तब कृपलानी की विरासत एक प्रकाशस्तंभ के रूप में हमारे सामने खड़ी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बंद्योपाध्याय, सुमित। (2004). प्लासी से विभाजन तक: आधुनिक भारत का इतिहास. नई दिल्ली: ओरिएंट लॉन्गमैन।
2. कोपलैंड, इयान। (1993). ब्रिटिश साम्राज्य के अंतिम चरण में भारतीय रियासतों की भूमिका (1917–1947). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. फ्रैंक, कैथरीन। (2002). इंदिरा: इंदिरा नेहरू गांधी का जीवन. हार्पर कॉलिन्स।
4. गुहा, रामचंद्र। (2008). गांधी के बाद का भारत: विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का इतिहास. पैन मैकमिलन।
5. जलाल, आयशा। (2005). दक्षिण एशिया में लोकतंत्र और अधिनायकवाद: एक तुलनात्मक ऐतिहासिक दृष्टिकोण. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. कृपलानी, जे.बी. (1972). माय टाइम्स: एक आत्मकथा. बंबई: भारतीय विद्या भवन।
7. मेनन, वी.पी. (1956). भारतीय रियासतों के एकीकरण की कहानी. ओरिएंट लॉन्गमैन।
8. मॉरिस-जोन्स, डब्ल्यू.एच. (1987). भारत में संसद. यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवेनिया प्रेस।
9. पारेख, भिक्षु। (1989). गांधी का राजनीतिक दर्शन: एक आलोचनात्मक परीक्षण. पल्पग्रेव मैकमिलन।
10. प्रसाद, बिमल. (1980). भारतीय विदेश नीति की उत्पत्ति. विकास पब्लिशिंग।
11. शरण, मनीष। (2018). क्या कृपलानी ने इंदिरा गांधी की आपातकाल की भविष्यवाणी की थी?. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 53(21), 43–49।
12. स्मिथ, डेविड ई. (1963). भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के रूप में. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।